अल्लाह के नाम से, जो अत्यन्त कृपाशील और दयावान है

प्रमाणों और चमत्कारों का विश्वकोश

मुहम्मद ﷺ की नुबूवत और क़ुरआन के सत्य होने के प्रमाण

वैज्ञानिक चमत्कार · ऐतिहासिक और पुरातात्विक साक्ष्य · पूरी हुई भविष्यवाणियाँ

तौरात और इंजील की शुभसूचनाएँ · जिन्न, जादू और अदृश्य का संसार

इतनी सरलता से समझाया कि बच्चा भी समझ ले · 151 रंगीन चित्र

151 प्रमाण, अपनी शक्ति के क्रम में

भाग छह

भाषा का चमत्कार और खुली चुनौती

सबसे बड़ा चमत्कार न आकाश में है न धरती में — वह स्वयं इस किताब में है: एक चुनौती जो चौदह सौ वर्षों से खुली पड़ी है और जिसे उठाने का साहस आज तक किसी ने नहीं किया।

12 प्रमाण

चुनौती

140 एक चुनौती जो तीन बार नीचे उतारी गई — और कभी उठाई नहीं गई

और यदि तुम्हें उसके बारे में सन्देह है जो हमने अपने बन्दे पर उतारा है, तो उस जैसी एक सूरह ले आओ और अल्लाह के सिवा अपने गवाहों को बुला लो, यदि तुम सच्चे हो।

सूरह अल-बक़रह — आयत 23

चुनौती क़दम-दर-क़दम नीचे उतरती है यहाँ तक कि सबसे कम सम्भव तक पहुँच जाती है

सीधी-सादी बात में

क़ुरआन ने अरबों को उस जैसा ले आने की चुनौती दी। जब वे असफल रहे तो उसने सीमा घटाई: दस सूरतें। जब वे फिर असफल रहे तो और घटाई: **एक ही सूरह**, चाहे तीन छोटी आयतों की हो। और आज तक कोई उसे नहीं ला सका।

उस समय लोग क्या मानते थे?

अरब निर्विवाद रूप से **वाग्मिता की क़ौम** थे। कविता उनका रजिस्टर और उनका गर्व थी; उसके लिए उकाज़ और ज़ुल-मजाज़ में बाज़ार लगते थे, और बड़े क़सीदे काबा पर लटकाए जाते थे। उनमें इमरुल-क़ैस, ज़ुहैर, लबीद और तरफ़ा थे। और उनके पास इस दावत को सबसे आसान रास्ते से गिरा देने का हर कारण मौजूद था।

आज विज्ञान क्या कहता है?

चौदह सदियाँ गुज़र गईं, और लोगों ने कोशिश की, और कुछ भी टिक न सका। जो कोई मुसैलिमा कज़्ज़ाब, इब्नुल-मुक़फ़्फ़ा और दूसरों की ओर मंसूब चीज़ें पढ़े वह उन्हें **किसी प्रतिद्वंद्वी के बजाय उपहास का पात्र** पाता है। और चुनौती आज भी खड़ी है, और आज साधन कहीं अधिक हैं: भाषा अकादमियाँ, विश्वविद्यालय, डिजिटल शब्दकोश और वे कम्प्यूटर जो शैली का विश्लेषण करते हैं। फिर भी एक भी ऐसा पाठ पेश नहीं हुआ जिसके बारे में उस भाषा के लोग कहें: यह उसके जैसा है।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

दो बातें इस चुनौती को अनोखा बनाती हैं। पहली, **नीचे उतरता क्रम** — जो उसका उलटा है जो कोई चुनौती देने वाला आमतौर पर करता है। जो हद से बढ़कर दावा करता है वह सीमा ऊँची करता है ताकि वह पहुँच से बाहर रहे; इसने उसे तब तक नीचे किया जब तक वह सबसे कम सम्भव तक न पहुँच गई: **एक ही सूरह, चाहे क़ुरआन की सबसे छोटी**। दूसरी, कि उसने उन्हें **किसी को भी साथ लेने की छूट दी**: "और अल्लाह के सिवा अपने गवाहों को बुला लो" — सब मिलकर आ जाओ और जिसे चाहो बुला लो। फिर उसने एक दूसरी आयत में परिणाम पहले से घोषित कर दिया: "**पर यदि तुम न कर सके — और तुम कभी न कर सकोगे**" — भविष्य के बारे में एक ऐसा दावा जो कोई जुआरी करने की हिम्मत न करे।

निरक्षरता

141 तुम इससे पहले कोई किताब नहीं पढ़ते थे

और तुम इससे पहले न कोई किताब पढ़ते थे और न अपने दाहिने हाथ से उसे लिखते थे; वरना झुठलाने वालों को सन्देह का मौक़ा मिल जाता।

सूरह अल-अनकबूत — आयत 48

यदि वे पढ़ते-लिखते होते तो झुठलाने वाले के पास एक दलील होती

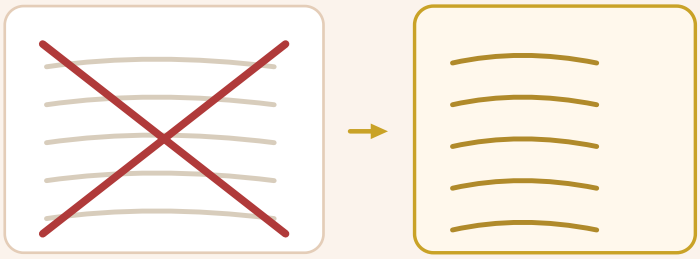

न पढ़ते हैं न लिखते हैं — अरबी की सबसे वाग्मी किताब

यहाँ निरक्षरता कोई दोष नहीं... वही तो प्रमाण है

सीधी-सादी बात में

नबी ﷺ **न पढ़ सकते थे न लिख सकते थे**, और उन्होंने किसी से कोई शिक्षा नहीं ली। और आयत इसका ज़िक्र करती है और कारण भी बताती है: यदि वे पढ़ते और लिखते होते तो **लोग सन्देह करते** और कहते कि उन्होंने किताबों से नक़ल किया।

उस समय लोग क्या मानते थे?

मक्का में लिखना दुर्लभ था और निरक्षरता आम। फिर भी मक्का में ऐसे लोग थे जो पढ़ते और लिखते थे, और प्रायद्वीप में किताबों तथा विद्वानों वाले यहूदी और ईसाई थे। तो यदि नबी ﷺ पढ़ने-लिखने वाले होते, तो आरोप तैयार होता और उसका कोई जवाब न होता।

आज विज्ञान क्या कहता है?

नबी ﷺ की निरक्षरता उनकी सीरत के सबसे मज़बूती से स्थापित ऐतिहासिक तथ्यों में है, और उनके अपने समय के विरोधियों ने उस पर विवाद नहीं किया — और वे नुक़्स ढूँढ़ने के सबसे अधिक इच्छुक लोग थे। उन्होंने **उन पर इसके सिवा हर चीज़ का आरोप लगाया**: उन्होंने कहा कवि, जादूगर, काहिन और पागल, और उन्होंने कहा "इन्हें तो बस एक आदमी सिखाता है" — और क़ुरआन ने जवाब दिया: "जिसकी ओर वे इशारा करते हैं उसकी ज़बान ग़ैर-अरबी है, और यह साफ़ अरबी ज़बान है।" यानी जिस आदमी की ओर वे इशारा करते थे वह ठीक से अरबी बोलता तक न था।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

यहाँ क़ुरआन **वह दलील पेश करता है जो उसके विरुद्ध दी जा सकती थी, और फिर उसे रद्द कर देता है**। और यह तरीक़ा वही अपनाता है जो निश्चिन्त हो। आयत कहती है: अजूबा यह नहीं कि यह किताब महान है, बल्कि यह कि वह **ऐसे व्यक्ति की ज़बान पर आई जो न पढ़ता है न लिखता**। और उसने दाँव और बढ़ा दिया: पाठ में पिछली क़ौमों की ख़बरें और सूक्ष्म ऐतिहासिक ब्योरे हैं, विरासत, न्याय और युद्ध पर पूरा क़ानून है, और ऐसी ब्रह्मांडीय बातों के वर्णन हैं जो अभी ज्ञात ही न थीं। और यह सब ऐसे व्यक्ति से जो एक पंक्ति तक न पढ़ सकता था। और "**वरना झुठलाने वालों को सन्देह का मौक़ा मिल जाता**" का अर्थ यही है — उनकी निरक्षरता ही वह चीज़ है जिसने सन्देह का दरवाज़ा बन्द कर दिया।

142 तेईस वर्ष — और एक भी विरोधाभास नहीं

तो क्या वे क़ुरआन पर विचार नहीं करते? यदि यह अल्लाह के सिवा किसी और की ओर से होता तो वे इसमें बहुत विरोधाभास पाते।

सूरह अन-निसा — आयत 82

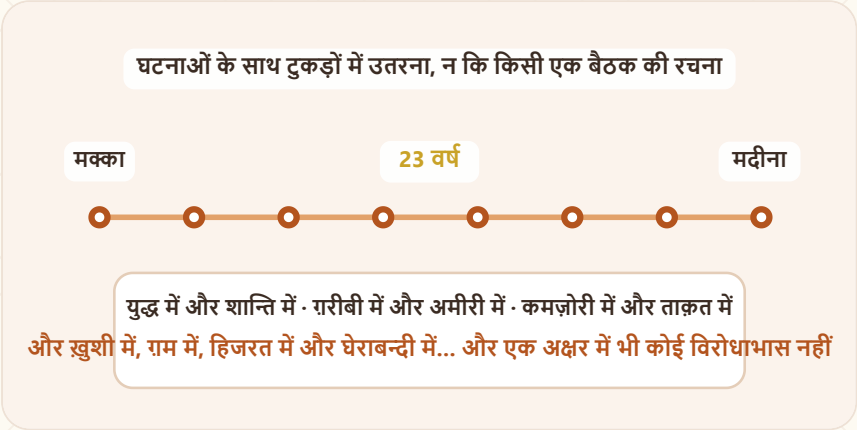

एक ऐसी किताब जो एक बैठक में न लिखी गई, जिसकी न समीक्षा हुई न संशोधन

सीधी-सादी बात में

क़ुरआन **तेईस वर्षों में टुकड़ों-टुकड़ों में** उतरा, एक आयत और कुछ आयतें जैसे परिस्थितियाँ माँगतीं — युद्ध में और शान्ति में, कठिनाई में और आसानी में। फिर भी आप उसमें कोई विरोधाभास नहीं पाते, न कोई तरीक़े का बदलना, और न पहले कही किसी बात से कोई पलटना।

उस समय लोग क्या मानते थे?

किताबें एक बैठक में रची जाती हैं और फिर प्रकाशन से पहले उनकी समीक्षा और संशोधन होता है, तो उनके विरोधाभास हटा दिए जाते हैं। इसके विपरीत क़ुरआन लोगों को **उतरते ही** सुना दिया जाता था; वे उसे याद कर लेते और लिख लेते, और फिर जो गुज़र चुका उसे बदलने का कोई रास्ता ही न था। और जो कुछ मक्का में उतरा वह हिजरत से वर्षों पहले उसके विरोधियों के हाथों में था।

आज विज्ञान क्या कहता है?

आज कोई भी इसे स्वयं परख सकता है: वह बीस वर्षों में टुकड़ों-टुकड़ों में एक पाठ लिखे, जो अक़ीदे, क़ानून, इतिहास, नैतिकता, ब्रह्मांड और आत्मा से निपटता हो, और फिर अन्त में उसकी समीक्षा कराए और उसमें कोई विरोधाभास न पाए। शोधकर्ता — मुसलमान और दूसरे — चौदह सदियों से क़ुरआन में विरोधाभास ढूँढ़ते रहे हैं, और "क़ुरआन के कठिन स्थलों" तथा "भिन्न दिखती आयतों की व्याख्या" पर पूरी-पूरी किताबें लिखी गईं, और वे सब इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जो भिन्न दिखता है वह **विविधता का भेद है, विरोध का नहीं**।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

आयत यहाँ **एक वैज्ञानिक, लागू किया जा सकने वाला मानदंड** देती है, कोई दावा नहीं। वह कहती है: यदि यह मानवीय होता तो **तुम इसमें बहुत विरोधाभास पाते**। और यह तार्किक रूप से सही है: बदलती परिस्थितियों में बीस वर्षों तक फैला कोई पाठ अपने लेखक की बदलती हालत का निशान अवश्य उठाएगा। और इससे भी विलक्षण बात यह है कि स्वर परिस्थितियों के साथ नहीं बदला: माफ़ी और दया की आयतें **विजय के बाद** उतरीं, उससे पहले नहीं, और धैर्य तथा वादे की आयतें **हार और घेराबन्दी में** उतरीं। यदि पाठ अपने लेखक की हालत का प्रतिबिम्ब होता, तो इसका उलटा अपेक्षित था।

143

एक विरोधी की गवाही

वलीद बिन मुग़ीरा की गवाही

अल्लाह की क़सम, उसमें एक मिठास है और उस पर एक रौनक़ है; उसका निचला हिस्सा भरपूर है और उसका ऊपरी हिस्सा फल देता है; और यह कोई मनुष्य नहीं कहता।

हाकिम और बैहक़ी की 'दलाइल' में रिवायत — सीरत की किताबों में प्रसिद्ध

यह क़ुरैश के सबसे समझदार और सबसे कट्टर दुश्मन ने कहा

"उसमें एक मिठास है... और उस पर एक रौनक़ है"

"और उसका निचला हिस्सा भरपूर है, और उसका ऊपरी हिस्सा फल देता है"

"और यह कोई मनुष्य नहीं कहता"

फिर वह पलटा और बोला: "यह तो बस चला आता हुआ जादू है"

उसने सच्चाई मान ली... फिर वह फ़ैसला चुना जो उसकी क़ौम को ख़ुश करे

सीधी-सादी बात में

वलीद बिन मुग़ीरा क़ुरैश के सबसे चतुर और वाणी के सबसे बड़े जानकारों में था, और इस दावत के सबसे कट्टर दुश्मनों में। जब उसने क़ुरआन सुना तो उसका वर्णन सबसे सुन्दर शब्दों में किया और कहा: **"यह कोई मनुष्य नहीं कहता।"** फिर उसकी क़ौम ने उस पर दबाव डाला तो उसने कहा: "यह तो बस चला आता हुआ जादू है।"

उस समय लोग क्या मानते थे?

क़ुरैश हज के मौसम से पहले हाजियों से मुहम्मद ﷺ के बारे में कहने को एक ही बात ढूँढ़ रहे थे, तो वे वलीद के गिर्द इकट्ठे हुए क्योंकि वह उनमें सबसे समझदार और कविता तथा वाग्मिता का सबसे बड़ा जानकार था। उन्होंने उसके सामने रखा: काहिन? पागल? कवि? जादूगर? — और उसने **इनमें से हर एक को रद्द कर दिया**, और वह भी वाणी की कला से ही ली गई दलीलों से।

आज विज्ञान क्या कहता है?

यह कहानी सीरत और तफ़सीर की किताबों में प्रसिद्ध है, और उसके बारे में जो उतरा वह सूरह अल-मुद्दस्सिर में है: "**निस्सन्देह उसने सोचा और अन्दाज़ा लगाया। तो वह मारा जाए, कैसा अन्दाज़ा लगाया। फिर वह मारा जाए, कैसा अन्दाज़ा लगाया। फिर उसने देखा। फिर उसने त्योरी चढ़ाई और मुँह बिगाड़ा। फिर वह पीठ फेरकर घमंड में आ गया और बोला: यह तो बस चला आता हुआ जादू है।**" ये आयतें उसकी मानसिक दशा का ठीक-ठीक वर्णन करती हैं: सोचना, फिर अन्दाज़ा लगाना, फिर देखना, फिर त्योरी चढ़ाना, फिर घमंड में मुँह मोड़ना, फिर वह फ़ैसला जिससे उसने अपनी क़ौम को ख़ुश किया। और भविष्यकथन तथा कविता को रद्द करने की उसकी दलीलें उससे विस्तार से रिवायत हैं।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

किसी विरोधी की गवाही सबसे प्रबल गवाही है, ख़ास तौर पर जब वह **उसी क्षेत्र का विशेषज्ञ हो जिसके बारे में वह गवाही दे रहा है**। वलीद कविता का एक निर्णायक था जिसके सामने क़सीदे पेश किए जाते थे। और उसने क़ुरआन और उस हर चीज़ के बीच एक सूक्ष्म तकनीकी भेद किया जो बाहर से उससे मिलती-जुलती थी: उसने कविता के बारे में कहा, "मैं कविता को पूरा जानता हूँ... और यह कविता नहीं", और भविष्यकथन के बारे में, "यह न काहिन की बुड़बुड़ाहट है न उसका तुकान्त गद्य"। फिर उसने उसकी बनावट का वर्णन किया: "**उसका निचला हिस्सा भरपूर है और उसका ऊपरी हिस्सा फल देता है**" — उसकी सतह सुन्दर है और उसकी गहराई अर्थ से समृद्ध। और यह एक शत्रु विशेषज्ञ का तकनीकी वर्णन है, किसी प्रशंसक की तारीफ़ नहीं। और **अपनी क़ौम के दबाव में** उसका पलट जाना — जो स्वयं क़ुरआन में दर्ज है — खोल देता है कि वह इनकार एक सामाजिक रुख़ था, कोई बौद्धिक विश्वास नहीं।

अपनी ही एक विधा

144 न कविता, न गद्य, न काहिनों का तुकान्त

और यह किसी कवि की वाणी नहीं — तुम बहुत कम ईमान लाते हो। और न किसी काहिन की वाणी — तुम बहुत कम नसीहत लेते हो।

सूरह अल-हाक़्क़ा — आयतें 41-42

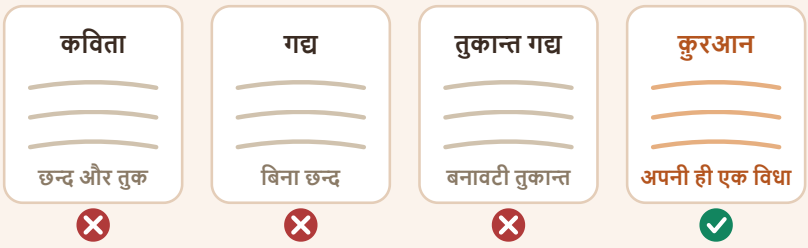

स्वयं उस भाषा के लोग उसे वर्गीकृत नहीं कर सके

एक ऐसा पाठ जो अरबी के किसी भी ज्ञात साँचे में नहीं बैठता

सीधी-सादी बात में

अरबी में उच्च वाणी के तीन रूप थे: अपने छन्दों वाली **कविता**, स्वतंत्र **गद्य**, और **काहिनों का तुकान्त गद्य**। और क़ुरआन इनमें से कोई नहीं — वह अपनी ही एक विधा है जो अकेली खड़ी है।

उस समय लोग क्या मानते थे?

अरब धरती के सबसे बड़े जानकार थे कविता के छन्दों, मात्राओं और तुकों के, और किसी टूटी पंक्ति को सहज ही पकड़ लेते थे। वे काहिनों का तुकान्त गद्य जानते थे और उसकी बनावटीपन का मज़ाक़ उड़ाते थे। फिर भी **क़ुरआन पर उनका फ़ैसला बुरी तरह डगमगाता रहा**: उन्होंने कहा कविता, फिर जादू, फिर भविष्यकथन, फिर अगलों की कहानियाँ — और हर राय पिछली को काटती हुई।

आज विज्ञान क्या कहता है?

क़ुरआन कविता से इसलिए अलग है कि वह **किसी छन्द और किसी तय तुक का पालन नहीं करता**; वह गद्य से इसलिए अलग है कि उसमें **एक भीतरी लय और नियमित विरामान्त** हैं; और वह तुकान्त गद्य से इसलिए अलग है कि काहिनों के तुकान्त में **लय के लिए शब्दों को खींचा-मरोड़ा जाता है**, जबकि क़ुरआन में विरामान्त अर्थ के पीछे चलते हैं, उस पर हुक्म नहीं चलाते। यह अरबी भाषा-अध्ययनों में और प्राच्यविद्या में, दोनों में एक स्थापित विषय है। प्राच्यविद् आर्बेरी ने कहा कि उसकी लय की उन भाषाओं में कोई मिसाल नहीं जिन्हें वे जानते थे।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

वर्गीकरण में विरोधियों का डगमगाना ही प्रमाण है। जब किसी कला के विशेषज्ञ किसी पाठ को अपनी ही कला की किसी श्रेणी में न रख पाएँ, और उस पर उनका फ़ैसला एक बैठक से दूसरी बैठक में अपना ही खंडन करने लगे, तो यह इस बात की निशानी है कि वह उस विधा से बाहर है जिसे वे जानते हैं। और क़ुरआन ने यही डगमगाहट उन्हीं के विरुद्ध दर्ज कर दी: "**देखो, वे तुम्हारे लिए कैसी-कैसी मिसालें गढ़ते हैं, तो वे भटक गए**।" फिर उसने उन्हें उसी कसौटी पर चुनौती दी जिसमें वे माहिर थे: न तलवार से न दौलत से, बल्कि **उसी कला में जिसमें वे धरती की हर दूसरी क़ौम से आगे थे**। और जो कोई किताब गढ़ता हो वह अपने विरोधियों को उसी मैदान में चुनौती देने का जुआ नहीं खेलता जिसमें वे सर्वोच्च हों।

उलाहना

145 एक ऐसी किताब जो अपने ही लाने वाले को उलाहना देती है

उसने त्योरी चढ़ाई और मुँह मोड़ लिया, क्योंकि उसके पास वह अन्धा आ गया। और तुम्हें क्या मालूम, शायद वह पवित्र हो जाता?

सूरह अबसा — आयतें 1-3

ऐसी आयतें जिनमें नबी ﷺ को खुला उलाहना है

"उसने त्योरी चढ़ाई और मुँह मोड़ लिया" · "अल्लाह तुम्हें माफ़ करे; तुमने उन्हें इजाज़त क्यों दी?"
"किसी नबी के लिए यह उचित नहीं कि उसके पास क़ैदी हों" · "और तुमने अपने मन में छिपा रखा"

फिर वे लोगों को नमाज़ में ऊँची आवाज़ से सुनाई जाती हैं
और याद की जाती हैं, लिखी जाती हैं, और कभी हटाई नहीं जातीं

जो कोई किताब गढ़ता है वह उसमें अपनी ही भर्त्सना नहीं डालता

सीधी-सादी बात में

क़ुरआन में ऐसी आयतें हैं जो **स्वयं नबी ﷺ को उलाहना देती हैं** और उनके एक रुख़ को सुधारती हैं। ये आयतें नमाज़ में लोगों को ऊँची आवाज़ से सुनाई जाती हैं, बच्चे और बूढ़े उन्हें याद करते हैं, और वे कभी हटाई नहीं गईं और न कभी हलकी की गईं।

उस समय लोग क्या मानते थे?

जो नुबूवत का दावा करता है उसे **एक ऐसी पूरी छवि चाहिए जिसमें कोई दाग़ न हो**, और उसके दुश्मन किसी भी चूक की ताक में बैठे रहते हैं। तो ऐसे पाठ का उतरना जो उसे उलाहना दे और उसके फ़ैसले को ग़लत ठहराए, और फिर उसी का मस्जिद में सबके सामने पढ़ा जाना — यह हर राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक हिसाब के विरुद्ध है।

आज विज्ञान क्या कहता है?

मिसालें बहुत हैं और स्पष्ट: **पूरी सूरह अबसा** उन्हें इस पर उलाहना देती हुई कि वे एक अन्धे से मुँह मोड़कर क़ुरैश के सरदारों की ओर हुए; "**अल्लाह तुम्हें माफ़ करे; तुमने उन्हें इजाज़त क्यों दी?**" तबूक से पीछे रह जाने वालों को इजाज़त देने पर; "**किसी नबी के लिए यह उचित नहीं कि उसके पास क़ैदी हों जब तक वह धरती में ख़ूब ख़ूँरेज़ी न कर ले**" बद्र के क़ैदियों पर; "**और तुमने अपने मन में वह छिपा रखा जिसे अल्लाह प्रकट करने वाला था, और तुम लोगों से डरे, जबकि अल्लाह इसका अधिक हक़दार है कि तुम उससे डरो**"; और "**तुम उसे क्यों हराम करते हो जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए हलाल किया?**" और आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने कहा: यदि नबी ﷺ वह्य में से कुछ छिपाते, तो यही आयत छिपाते।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

यह इस भाग की सबसे प्रबल बौद्धिक दलीलों में है, और इसे इतिहासकार **शर्मिन्दगी की कसौटी** कहते हैं: वह पाठ जो अपने पहुँचाने वाले के हित को हानि पहुँचाए वह सत्य के अधिक निकट है। और ध्यान दीजिए कि उलाहना किन्हीं हाशिये की बातों पर नहीं, बल्कि **बड़े राजनीतिक और सैनिक फ़ैसलों** पर पड़ा: क़ैदियों के साथ सलूक, मुनाफ़िक़ों को दी गई इजाज़त, और उनके अपने घर की एक निजी स्थिति। इसमें एक और विवरण भी जोड़िए: क़ुरआन ने **कुछ प्रश्नों का उत्तर दिया और कुछ का नहीं**, बल्कि इफ़्क की घटना में नबी ﷺ से वह्य कई दिन रोक ली गई जबकि उनकी अपनी पत्नी पर आरोप था, यहाँ तक कि लोगों ने जो कहना था कह लिया। यदि मामला उनके अपने हाथ में होता तो वह एक दिन भी न टलता।

शैली का अन्तर

146

उनकी अपनी वाणी कभी क़ुरआन जैसी नहीं होती

और वह अपनी इच्छा से नहीं बोलता। वह तो बस एक वह्य है जो उतारी जाती है।

सूरह अन-नज्म — आयतें 3-4

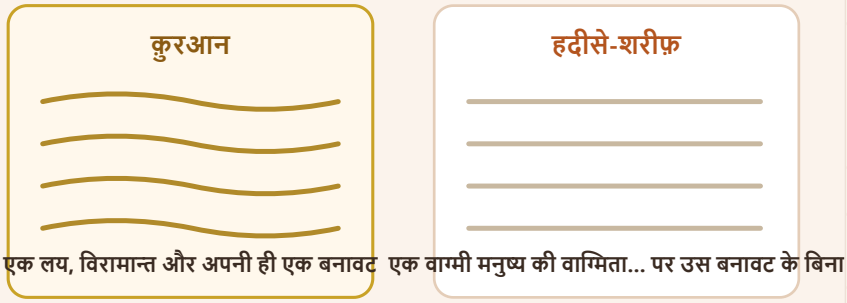

शैली-विश्लेषण दोनों को बिना किसी कठिनाई के अलग कर देता है

सीधी-सादी बात में

नबी ﷺ अरबों में सबसे अधिक वाग्मी थे, और उनकी बातें वाग्मिता के शिखर पर हैं। फिर भी **उनकी वाणी किसी से भी कभी एक बार क़ुरआन से गड्डमड्ड नहीं हुई** — दोनों शैलियाँ साफ़ अलग हैं, और एक बार भी कोई हदीस ग़लती से क़ुरआन की ओर मंसूब नहीं की गई।

उस समय लोग क्या मानते थे?

यदि क़ुरआन उनकी ﷺ अपनी रचना होता, तो उनकी पूरी वाणी में एक ही शैली होती — क्योंकि हर व्यक्ति एक शैली-छाप उठाए फिरता है जिससे वह बच नहीं सकता, ख़ास तौर पर बीस वर्षों में। और उनके साथी रोज़ाना दोनों सुनते थे, और दोनों उनके लिए एक क्षण को भी गड्डमड्ड नहीं हुए।

आज विज्ञान क्या कहता है?

शैली-मापन आज एक स्थापित विज्ञान है, जो शब्दों के वितरण, वाक्यों की लम्बाई और संरचनात्मक नमूनों को नापकर किसी पाठ को उसके लेखक से जोड़ता है। इसे क़ुरआन और हदीस पर लागू किया गया है और उनका अन्तर साफ़ है। सबसे स्पष्ट संरचनात्मक अन्तर: क़ुरआन **नियमित विरामान्तों** पर, सम्बोधन के बदलावों पर और सर्वनामों के बीच आवाजाही पर टिका है, और हदीस इस बनावट का पालन नहीं करती। और फिर क़ुरआन **स्वयं नबी ﷺ को हुक्म, मनाही और उलाहने से सम्बोधित करता है** और उन्हें "कह दो" का निर्देश देता है — तीन सौ से भी अधिक बार।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

इसमें एक तीसरी श्रेणी भी जोड़िए: **हदीसे-क़ुदसी** — जो नबी ﷺ अपने रब से अर्थ में रिवायत करते हैं, और जो फिर भी **क़ुरआन नहीं गिनी जाती और नमाज़ में नहीं पढ़ी जाती**। तो हमारे पास एक ही व्यक्ति की कही हुई वाणी के तीन स्तर हैं, जो हुक्म और सलूक में तीखी तरह अलग हैं: क़ुरआन की तिलावत इबादत है, वही चुनौती का विषय है, और वह अक्षर दर अक्षर तवातुर से पहुँचाया गया है; हदीसे-क़ुदसी अर्थ में अल्लाह की ओर मंसूब है और नबी ﷺ के अपने शब्दों में रिवायत की जाती है; और नबवी हदीस उनकी अपनी वाणी है। और यह **सूक्ष्म तीन-स्तरीय भेद** पहले ही दिन से क़ायम है और कभी धुँधला नहीं हुआ। यदि यह सब एक ही मानवीय स्रोत से आता, तो यह अलगाव बीस वर्षों तक बनाए रखा ही नहीं जा सकता था।

संक्षिप्तता

147

और तुम्हारे लिए क़िसास में जीवन है

और तुम्हारे लिए क़िसास में जीवन है, ऐ बुद्धि वालो, ताकि तुम बचकर चलो।

सूरह अल-बक़रह — आयत 179

अरबों ने जो सबसे वाग्मी बात कही

"क़त्ल ही क़त्ल को सबसे अधिक रोकता है"

14 अक्षर

→

और क़ुरआन ने कहा

"और तुम्हारे लिए क़िसास में जीवन है"

अक्षर कम... और अर्थ कहीं अधिक

उसमें जीवन है, केवल क़त्ल का इनकार नहीं · और उसने लक्ष्य बताया, साधन नहीं
और उसने उसे न्यायपूर्ण क़िसास से बाँधा, खुले क़त्ल से नहीं

सैकड़ों में से एक मिसाल, जिनका अध्ययन वाग्मिता के विद्वानों ने किया

सीधी-सादी बात में

इस विषय पर अरबों को जिस सबसे वाग्मी बात पर गर्व था वह उनका यह कथन था: **"क़त्ल ही क़त्ल को सबसे अधिक रोकता है।"** फिर क़ुरआन **कम अक्षरों और कहीं अधिक समृद्ध अर्थ** वाला एक वाक्य लेकर आया: "और तुम्हारे लिए क़िसास में जीवन है।"

उस समय लोग क्या मानते थे?

"क़त्ल ही क़त्ल को सबसे अधिक रोकता है" अरबों में संक्षिप्तता का शिखर गिना जाता था और कहावत के तौर पर पेश किया जाता था। वे बड़े अर्थों को थोड़े शब्दों में समेटने में होड़ करते थे, और उसे वाग्मिता का सर्वोच्च दर्जा गिनते थे।

आज विज्ञान क्या कहता है?

वाग्मिता के विद्वानों ने दोनों के अन्तर का विश्लेषण किया और सात से भी अधिक बिन्दु पाए। सबसे स्पष्टों में: कि क़ुरआन ने **जीवन** का ज़िक्र किया, जो प्रिय लक्ष्य है, जबकि कहावत ने क़त्ल का ज़िक्र किया, जो अप्रिय है; कि उसने उसे **"क़िसास"** से सीमित किया, यानी न्यायपूर्ण और वैध क़त्ल, जबकि कहावत ने क़त्ल को बिना शर्त छोड़ दिया तो उसमें अन्याय भी आ गया; कि उसने **पूरे समाज के लिए एक निरन्तर जीवन** की पुष्टि की, न कि केवल एक मामले का इनकार; कि उसने "क़त्ल" शब्द को दो बार दोहराने से बचाया; और कि वह नैतिक उद्देश्य पर बन्द हुआ: "ताकि तुम बचकर चलो"। और यह सब कम अक्षरों में।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

यहाँ महत्वपूर्ण यह अकेली मिसाल नहीं, बल्कि **यह कि यह कोई अपवाद नहीं**। समूची अरबी वाग्मिता-विद्या — मआनी, बयान और बदीअ — पहले-पहल इसी कोशिश से उठी कि इस पाठ की अनुकरणीयता को समझाया जाए, और उसमें सैकड़ों किताबें लिखी गईं, बाक़िल्लानी की *इजाज़ुल-क़ुरआन* से लेकर अब्दुल-क़ाहिर जुर्जानी की *दलाइलुल-इजाज़* और *असरारुल-बलाग़ा* तक। यानी **एक पूरा मानवीय विज्ञान एक ही किताब का विश्लेषण करने के लिए खड़ा हुआ** — और धरती की किसी भाषा के इतिहास में इसकी कोई मिसाल नहीं। और आज तक शोधकर्ता उसमें से वह निकालते जा रहे हैं जो उनसे पहले वाले न निकाल सके।

148 मुझे समग्र वाणी दी गई

मुझे समग्र वाणी के साथ भेजा गया।

बुख़ारी और मुस्लिम की रिवायत — सर्वसम्मत

- **"दीन ख़ैरख़्वाही है"**
- **"न हानि पहुँचाना है न बदले में हानि"**
- **"कर्म तो नीयतों पर ही हैं"**
- **"मुसलमान वह है जिसकी ज़बान और हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहें"**

चन्द शब्द... जिन पर फ़िक़्ह के पूरे-पूरे अध्याय खड़े किए गए

ऐसे सार्वभौमिक नियम जो हज़ारों मामलों को तरतीब दे देते हैं

सीधी-सादी बात में

नबी ﷺ की विशिष्ट विशेषताओं में यह था कि वे **थोड़े शब्द कहते जो बहुत अर्थ उठाए होते**। चन्द शब्दों की हदीसों पर फ़िक़्ह और क़ानून के पूरे-पूरे अध्याय खड़े किए गए हैं।

उस समय लोग क्या मानते थे?

संक्षिप्त हिकमत हर क़ौम में जानी जाती है: अरबों की कहावतें, भारत के सूत्र, यूनानियों की सीखें। पर ये **आम नैतिक उपदेश** हैं, न कि ऐसे नियम जिन पर कोई समन्वित क़ानूनी व्यवस्था खड़ी की जाए। और किसी कहावत और किसी क़ानूनी सिद्धान्त के बीच का अन्तर बुनियादी है।

आज विज्ञान क्या कहता है?

एक मिसाल लीजिए: "**न हानि पहुँचाना है न बदले में हानि**" — अरबी में चार शब्द। इस पर इस्लामी फ़िक़्ह की एक पूरी शाखा खड़ी की गई, जो पड़ोस के रिश्तों, निर्माण, तलाक़, बिक्री, शुफ़ा, ग़स्ब, मिल्कियत और मालिक के अधिकारों की सीमा तक को समेटती है। वह उन **पाँच बड़े क़ायदों** में से एक बन गया जिन पर सारे फ़िक़्ही मकातिब घूमते हैं। और उसी जैसा है "कर्म तो नीयतों पर ही हैं", जिसे इमामों ने पूरे ज्ञान का एक तिहाई गिना, और जिसके बारे में शाफ़िई ने कहा कि वह फ़िक़्ह के सत्तर अध्यायों में दाख़िल होता है।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

ऐसा सार्वभौमिक नियम गढ़ने की क्षमता जो एक ही साथ व्यापक भी हो और विशिष्ट भी किसी लम्बे पाठ के लिखने से कहीं अधिक कठिन है। नियम को वह सब समेटना होता है जो उसके नीचे आता है और वह सब बाहर रखना होता है जो नहीं आता, और उसे उन मामलों के आगे भी टिकना होता है जो उसके लेखक के मन में कभी आए ही नहीं। और आज विधायक इसी पर मेहनत करते हैं, और खंडों में पाठ निकालते हैं जिन्हें फिर हर वर्ष संशोधित करना पड़ता है। चार शब्दों का कोई पाठ चौदह सदी टिका रहे और ऐसी स्थितियों को समेट ले जो थीं ही नहीं — औद्योगिक प्रदूषण, डिजिटल हानि — यह ठहरने योग्य बात है। और ध्यान दीजिए कि हदीस स्वयं इसे किसी अर्जित योग्यता नहीं, बल्कि एक देन से जोड़ती है: "**मुझे भेजा गया** समग्र वाणी के साथ।"

149 लाखों सीनों में बसी एक किताब

बल्कि वे स्पष्ट आयतें हैं उन लोगों के सीनों में जिन्हें ज्ञान दिया गया है।

सूरह अल-अनकबूत — आयत 49

मानव इतिहास में सबसे अधिक कंठस्थ की गई किताब

हर महाद्वीप और हर पीढ़ी में लाखों हाफ़िज़

हर सीने में एक जीवित प्रति — जिसे न जलाया जा सकता है न बदला जा सकता है

सीधी-सादी बात में

क़ुरआन अकेली किताबों में सुरक्षित नहीं रखा गया — बल्कि **लोगों के सीनों** में। और चौदह सदियों से हर पीढ़ी में उसे लाखों मनुष्य कंठस्थ करते आए हैं, और उनमें ऐसे बच्चे भी हैं जो अरबी बोलते तक नहीं।

उस समय लोग क्या मानते थे?

प्राचीन किताबें चन्द प्रतियों में रखी जाती थीं जो पुरोहितों और विद्वानों के पास होती थीं। यदि पुस्तकालय जल जाता या प्रति खो जाती तो किताब ही खो जाती — और बहुत-सी किताबों के साथ यही हुआ जो अब केवल अपने नामों से जानी जाती हैं। और निरक्षरता किसी भी पाठ के फैलने में एक बाधा थी।

आज विज्ञान क्या कहता है?

आज क़ुरआन कंठस्थ करने वालों की संख्या लाखों में आँकी जाती है — इंडोनेशिया, नाइजीरिया, तुर्की, पाकिस्तान, अरब देशों, यूरोप और अमेरिका में। अन्तरराष्ट्रीय प्रतियोगिताएँ होती हैं जिनमें वे उसे अक्षर दर अक्षर, सही हरकतों और तजवीद के साथ पढ़ने में होड़ करते हैं। और **उनमें से अधिकतर अरब नहीं हैं** — यानी वे ऐसी भाषा का पाठ कंठस्थ करते हैं जो उनकी मातृभाषा नहीं। मानव इतिहास की कोई दूसरी किताब ऐसी नहीं जानी जाती जो इतनी संख्या में और इतनी बारीकी से कंठस्थ की गई हो।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

इसका असर **बदलाव की असम्भवता** पर ही महत्व रखता है। जो पाठ केवल किताबों में सुरक्षित हो उसे प्रतियों पर क़ब्ज़ा करके बदला जा सकता है। पर जो पाठ दूर-दूर के महाद्वीपों में लाखों लोगों को कंठस्थ हो, जो किसी एक सत्ता, किसी एक भाषा और किसी एक राज्य से बँधे न हों, और जो दिन में पाँच बार नमाज़ में पढ़ा जाता हो — उसका एक अक्षर बदल देना **व्यवहारिक रूप से असम्भव** है, क्योंकि वह पहली ही जमाअत की नमाज़ में खुल जाएगा। और आयत ठीक इसी की ओर संकेत करती है: "स्पष्ट आयतें **सीनों में**" — न कि "पन्नों में"। और यह "निस्सन्देह हमने ही यह उपदेश उतारा, और निस्सन्देह हम ही उसकी रक्षा करने वाले हैं" का व्यावहारिक साकार होना है, और वह भी एक ऐसी मानवीय क्रियाविधि से जो देखी और गिनी जा सकती है।

आयतों के विरामान्त

150 हर आयत उसी पर बन्द होती है जो उसके अनुकूल हो

और अल्लाह प्रभुत्वशाली, तत्वदर्शी है। और अल्लाह क्षमाशील, दयावान है। और अल्लाह सुनने वाला, जानने वाला है।

क़ुरआन भर में बिखरे विरामान्त

एक विरामान्त की जगह दूसरा रख दें तो अर्थ बिगड़ जाता है

दंड और सामर्थ्य का सन्दर्भ
"प्रभुत्वशाली, तत्वदर्शी" ✓

तौबा और क्षमा का सन्दर्भ
"क्षमाशील, दयावान" ✓

दुआ और शिकायत का सन्दर्भ
"सुनने वाला, जानने वाला" ✓

छह हज़ार से अधिक आयतें... और हर विरामान्त अपनी जगह पर

किसी आयत की विषय-वस्तु और उसे बन्द करने वाले अल्लाह के नाम के बीच एक सूक्ष्म सामंजस्य

सीधी-सादी बात में

क़ुरआन की अधिकतर आयतें अल्लाह के दो सुन्दर नामों पर बन्द होती हैं। और विलक्षण बात यह है कि **हर विरामान्त अपनी आयत के विषय के ठीक अनुकूल है** — एक विरामान्त की जगह दूसरा रखकर देखिए, आप तुरन्त महसूस करेंगे कि कुछ बिगड़ गया।

उस समय लोग क्या मानते थे?

अरबी कविता पूरे क़सीदे में एक ही तुक निभाती है, और अक्सर **उसी के लिए शब्दों को खींचा-मरोड़ा जाता है** यहाँ तक कि पंक्ति में ऐसा शब्द भर दिया जाता है जिसकी उसे ज़रूरत ही नहीं। और यह एक ऐसा दोष है जिसे आलोचक पहचानते हैं। और काहिनों का तुकान्त गद्य तो इससे भी अधिक खींचा-तानी वाला था। तो नियमित विरामान्तों वाले किसी भी पाठ में ऐसी खींचातानी की अपेक्षा होगी।

आज विज्ञान क्या कहता है?

क़ुरआन में मामला ठीक उलटा है: **विरामान्त अर्थ के पीछे चलता है, उस पर हुक्म नहीं चलाता**। दंड और बदले की कोई आयत "प्रभुत्वशाली, बदला लेने वाला" पर बन्द होती है; तौबा की कोई आयत "क्षमाशील, दयावान" पर; दुआ की कोई आयत "सुनने वाला, जानने वाला" पर — क्योंकि दुआ करने वाले को यह चाहिए कि उसे सुना जाए और उसका हाल जाना जाए। और इस बारीकी की सबसे प्रसिद्ध मिसाल: चोरी की आयत "**प्रभुत्वशाली, तत्वदर्शी**" पर बन्द होती है — दंड लागू करने में प्रभुत्व और उसे क़ानून बनाने में तत्वदर्शिता; और जब उसके बाद तौबा की आयत आती है तो वह "**क्षमाशील, दयावान**" पर बन्द होती है। इस पर "फ़वासिल का विज्ञान" के नाम से पूरी-पूरी किताबें लिखी गई हैं।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

यह ख़ुद करके देखिए: किसी भी भाषा का कोई लम्बा तुकान्त पाठ लीजिए और परखिए कि क्या हर तुक अपने वाक्य की विषय-वस्तु के ठीक अनुकूल है। आप निश्चित रूप से ऐसी जगहें पाएँगे जो छन्द या तुक के लिए भर दी गई हैं — और मानवीय काम में यह स्वाभाविक है। क़ुरआन में छह हज़ार से अधिक आयतें हैं, जिनमें से अधिकतर किसी विरामान्त पर ख़त्म होती हैं, और जो **तेईस वर्षों में टुकड़ों-टुकड़ों में** उतरीं, बिना किसी मसौदे और बिना किसी संशोधन के। इतनी संख्या में और उतरने के उस ढंग को देखते हुए इस सामंजस्य का क़ायम रहना किसी भाषाई कौशल से नहीं समझाया जा सकता, चाहे वह कितना ही बड़ा हो।

किताब का समापन

151 और अब — आप इस सबका क्या करेंगे?

हम उन्हें अपनी निशानियाँ क्षितिजों में भी दिखाएँगे और स्वयं उनके भीतर भी, यहाँ तक कि उन पर स्पष्ट हो जाए कि यही सत्य है। क्या तुम्हारे रब के बारे में यह काफ़ी नहीं कि वह हर चीज़ का गवाह है?

सूरह फ़ुस्सिलत — आयत 53

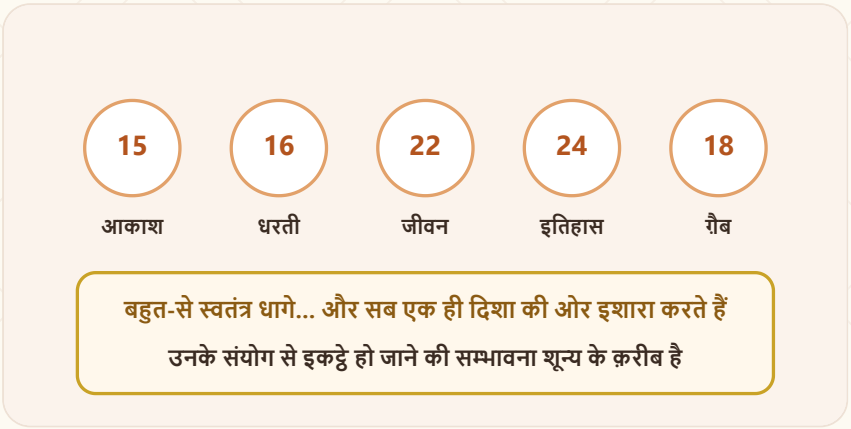

आपसे किसी एक प्रमाण के आगे झुकने को नहीं कहा जा रहा... बल्कि उन सबको एक साथ देखने को

सीधी-सादी बात में

आप किताब के अन्त तक पहुँच चुके हैं। यहाँ से गुज़रे हर प्रमाण से अकेले-अकेले बहस की जा सकती है। पर असली प्रश्न यह है: **इस बात की क्या सम्भावना है कि ये सब संयोग से एक ही व्यक्ति में आ मिलें?**

उस समय लोग क्या मानते थे?

इतिहास की हर क़ौम के पास कुछ न कुछ था जिसे वह ऊँचा उठाती थी। पर जो प्रश्न उन्हें अलग करता है वह यह है: क्या उसके पास ऐसा कुछ था जिसे **परखा और झुठलाया जा सके**? किंवदन्तियाँ न कोई तिथि से बँधी भविष्यवाणी देती हैं, न अपने ही युग के विज्ञान का खंडन करता कोई ब्रह्मांडीय वर्णन, और न कोई खुली चुनौती जो चौदह सदी खड़ी रहे।

आज विज्ञान क्या कहता है?

आपने यहाँ जो पढ़ा वह पाँच बिलकुल स्वतंत्र धागे हैं, जिनमें से कोई दूसरे पर निर्भर नहीं: **एक ब्रह्मांडीय वर्णन** जो अपने युग के विज्ञान का खंडन करता था और फिर सदियों बाद विज्ञान ने उसकी पुष्टि की; **पुरातात्विक गवाहियाँ** जो इनकार किए जाने के बाद ज़मीन से निकलीं; **तिथि सहित, निश्चित भविष्यवाणियाँ** जो कही गई बात के अनुसार पूरी हुईं; **स्वयं विरोधियों की किताबों के पाठ**, जो आज भी उनके हाथों में हैं; और **एक खुली भाषाई चुनौती** जो कभी उठाई नहीं गई। इनमें से एक धागा गिर भी जाए तो बाक़ी चार फिर भी खड़े रहते हैं।

यह निर्णायक चमत्कार क्यों है?

यहाँ तर्क **स्वतंत्र प्रमाणों के जमा होने** का तर्क है, और यही अदालतों में और विज्ञान में समान रूप से लागू होता है। एक प्रमाण शायद एक सम्भावना हो, और दो शायद एक संयोग — पर ऐसे दर्जनों प्रमाण जो ऐसे क्षेत्रों से आते हों जिनके बीच कोई सम्बन्ध ही नहीं — खगोल विज्ञान, भूविज्ञान, चिकित्सा, पुरातत्व, इतिहास और भाषा — और सब एक ही दिशा की ओर इशारा करें, यह संयोग से नहीं समझाया जा सकता। और क़ुरआन आपसे अन्धा समर्पण नहीं माँगता; वह आपको सात सौ से भी अधिक जगहों पर देखने और सोचने की दावत देता है: "क्या वे देखते नहीं?", "क्या वे विचार नहीं करते?", "क्या वे बुद्धि से काम नहीं लेते?", "कह दो: अपना प्रमाण लाओ।" और उसने आपके सामने वह रख दिया जिसका उसने वादा किया था: **"हम उन्हें अपनी निशानियाँ क्षितिजों में भी दिखाएँगे और स्वयं उनके भीतर भी।"** और आपने देख लिया। बाक़ी अब अकेले आप पर छोड़ा जाता है।